# "भीष्म साहनी के नाटक 'हानूश' और 'कबिरा खड़ा बजार में' का वैशिष्ट्य"

**मिहिर रमेशभाई चौधरी**
पीएच.डी. शोधकर्ता, हेमचंद्राचार्य उत्तर गुजरात विश्वविद्यालय, पाटन
chaudharimihir1991@gmail.com

**प्रस्तावना :**

भीष्म साहनी आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य के प्रमुख स्तम्भों में से एक हैं। इन्हें हिंदी साहित्य में प्रेमचंद की परम्परा का लेखक माना जाता है क्योंकि ये अपने लेखनी में सदैव मानवीय मूल्यों के हिमायती रहे। साहित्य के प्रति अपने समर्पण अथक परिश्रम और सतत साहित्य साधना के द्वारा भीष्म साहनी ने हिन्दी साहित्य जगत में अपना विशिष्ट स्थान बनाया है। भीष्म साहनी ने उपन्यास, कहानी, नाटक निबन्ध और आत्मकथा आदि गद्य विधाओं में सृजन कर हिन्दी साहित्य को समृद्ध करने में महत्वपूर्ण योगदान किया है। इनकी लेखनी में मानवीय संवेदना के साथ-साथ सामाजिक सरोकार, जीवन मूल्य, यथार्थवादी दृष्टिकोण हमेशा दिखाई पड़ता है। इनका रचनात्मक संसार जीवन के विस्तृत उतार-चढ़ाव और मोड़ों के बावजूद संवेदना के स्तर पर अविचलित रहा है। बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न भीष्म साहनी ने अपने नाटकों के माध्यम से समकालीन हिन्दी नाटककारों में एक विशिष्ट स्थान बनाया है। भीष्म साहनी के सभी नाटक युगीन समस्याओं तथा जनसामान्य की पीड़ा और व्यथा का चित्रण अत्यंत प्रभावशाली रूप में करते हैं। इनके नाटकों की विषयवस्तु लगभग इतिहास, पुराण, मिथक, लोक कथा और किंवदंतियों पर आधारित हैं। उन्होंने नाटकों के माध्यम से आज के युग की किसी न किसी मानवीय स्थिति का संवेदनात्मक रूप में उद्घाटन किया है।

**भीष्म साहनी का जीवन परिचय :**

भीष्म साहनी एवं उनके नाट्य साहित्य का सामान्य परिचय भीष्म साहनी का जन्म 8 अगस्त 1915 को रावलपिण्डी (पाकिस्तान) में हुआ था। सन् 1947 में देश विभाजन के पश्चात ये कुछ समय तक बम्बई में रहे। इसके बाद अम्बाला और अमृतसर में अध्यापक रहने के बाद दिल्ली आ गए और वहीं स्थायी रूप से रहे। इनके पिता हरवंशलाल साहनी आर्य समाजी थे, व्यापारी होने के बावजूद वे अध्येता और समाजोन्मुख थे, पुरुषार्थ में आशा रखते थे। भीष्म साहनी की माँ लक्ष्मीदेवी धर्मपरायण, सेवाभावी, प्रेम व त्याग की प्रतिमूर्ति थीं। वह आर्य समाज से प्रभावित उदार विचारों वाली महिला थीं। भीष्म साहनी के बड़े भाई बलराज साहनी, हिंदी फिल्मों के जाने माने अभिनेता थे। इन्हीं पारिवारी संस्कारों का प्रभाव था कि आगे चलकर भीष्म साहनी समाजोन्मुख हुए। 1937 में उन्होंने गवर्नमेंट कॉलेज लाहौर से अंग्रेजी साहित्य में एम. ए. किया तथा सन 1958 में पंजाब विश्वविद्यालय चण्डीगढ़ से पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त की। पंजाबी मातृ भाषा के अतिरिक्त उन्हें हिन्दी, अंग्रेजी, रूसी और उर्दू भाषाओं की जानकारी थी। साहित्यिक परिवेश तो उन्हें बचपन से ही मिला था। इनके पिता फारसी के सूफी कवि शेख सादी के प्रेमी और कबीर के भक्त थे। भीष्म साहनी को बचपन से ही अपने पिता से शेरो शायरी और नज़्में सुनने का अवसर मिलता रहता था। माँ और दादी से कहानियाँ, गीत

और भजन सुनते रहते थे। इस तरह बचपन से ही इनकी साहित्यिक अभिरुचियों को विकसित होने का अवसर मिला और लेखन कार्य में प्रवृत्त हो गए। साहित्यिक जगत में प्रेमचंद की मानवीय सद्भावनाओं ने इन्हें काफी प्रेरित किया। इसके अतिरिक्त सुदर्शन, जैनेन्द्र, अज्ञेय और यशपाल से भी वे प्रभावित व प्रेरित हुए।

हिन्दी साहित्य में महत्वपूर्ण योगदान के लिए उन्हें अनेक पुरस्कारों से भी सम्मानित किया गया। इन्हें 1975 में 'तमस' के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार, 1980 में एफ्रो एशियन राइटर्स एसोसिएशन का 'लोटस अवार्ड', 1983 में सोवियत लैंड नेहरू अवार्ड तथा 1998 में भारत सरकार के पद्मभूषण अलंकरण से अलंकृत किया गया। भीष्म साहनी के बारे में यह बताना जरूरी है कि आपने साहित्य लेखन की शुरूआत स्वतंत्रता प्राप्ति के दौर से की और नाट्य लेखन की शुरूआत आठवें दशक से।

नाटक और रंगमंच के प्रति लगाव और आकर्षण उनमें बचपन से ही था, जो विभिन्न परिस्थितियों एवं रूपों में आजीवन बना रहा। अपने बड़े भाई बलराज साहनी के साथ बालपन में ही अभिनय करने का उल्लेख उन्होंने अपनी आत्मकथा में किया है।

**भीष्म साहनी के नाटक :**

भीष्मसाहनी ने आठवें दशक से नाटकों का लेखन शुरू किया और एक के बाद एक छः नाटकों का सृजन किया - 'हानूश', 'कबिरा खड़ा बजार में, माधवी, 'मुआवजे. 'आलमगीर' और 'रंग दे बसंती चोला।

**'हानूश' नाटक का वैशिष्ट्य :**

'हानूश' भीष्म साहनी का पहला नाटक है, जो 1977 ईस्वी में प्रकाशित हुआ था। नाटककार ने इस तीन अंक के नाटक में एक कलाकार की सृजनेच्छा और संकल्प को, उसकी विवशताओं को तथा उसकी संकटापन्न स्थिति को पूरी तरह पहचाना है। 1960 ईस्वी के आसपास भीष्म साहनी, निर्मल वर्मा के साथ चेकेस्लोवाकिया की राजधानी प्राग घूमने गए थे। प्राग शहर में घूमते घूमते संयोगवश उन्होंने वहाँ की एक ऐतिहासिक मीनारी घड़ी से जुड़ी एक कथा सुनी, जिसका सार इतना है कि बारह साल तक घड़ी बनाने की कोशिश करने वाले हानूश को जब सफलता मिली तो हानूश को तत्कालीन बादशाह द्वारा अजीब तरीके से पुरस्कृत किया गया। बादशाह ने हानूश की आँखें निकलवा लीं। शायद इसलिए कि हानूश दोबारा इस तरह की घड़ी न बना सके। बादशाह द्वारा कलाकार को अजीब तरह से सम्मानित किए जाने की बात भीष्म साहनी जी को विचलित कर गई जो एक नाटक के रूप में अभिव्यक्त हुई। इस छोटी सी दंत कथा को आधार बनाकर उन्होंने एक रंगमंचीय क्षमता वाला सफल नाटक लिखा। जिसमें नाटककार ने मध्ययुग का एक भरा पूरा परिवेश गढ़ा, काल्पनिक घटना विन्यास द्वारा कथावस्तु का निर्माण किया। पुरानी दंत कथा पर आधारित होते हुए भी नाटककार ने उसमें इतने प्राण भर दिए कि नाटक दर्शकों के सामने सजीव हो उठता है। इसकी कहानी भारतीय परिवेश की न होते हुए भी यहाँ के जन-मानस को अपनी सी लगती है। छोटे से गरीब मजदूर को सत्ता के द्वारा उत्पीड़ित किए जाने की यह मार्मिक कथा है। हानूश का चरित्र इस नाटक की सबसे बड़ी

ISSN PRINT 2319 1775 Online 2320 7876
Research Paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved, Journal UGC CARE Listed (Group-I) Volume 11, Iss 01 2022

उपलब्धि है जिसमें एक साथ संघर्ष और पराजय, सुख और दुख, निराशा और क्षोभ के दर्शन होते हैं। साथ ही एक कलाकार की कल्पनाशीलता व सृजनशीलता के बीच आशा-निराशा के भाव दिखाई देते हैं।

यह 15वीं शताब्दी के एक ऐसे ताला बनाने वाले मजदूर की कथा है जो विषम परिस्थितियों में संघर्ष करते हुए अपनी जवानी के सत्रह साल चेकेस्लोवाकिया की मीनारी घड़ी बनाने में खपा देता है। अंततः जब कलाकार अपने सृजन में सफल हुआ और घड़ी प्राग नगरपालिका की मीनार पर लगाई गई तो बादशाह ने प्रसन्न होकर एक ओर देश का गौरव बढ़ाने वाले उस गरीब कलाकार को पुरस्कृत और सम्मानित किया तो दूसरी ओर उसकी दोनों आँखें निकाल लेने का हुक्म भी दे दिया जिससे वह दूसरी घड़ी न बना सके। कारण यह है कि हानूश ने यदि दूसरी घड़ी बनाई तो पहली घड़ी का महत्व कम हो जाएगा, जो नगर के चौराहे पर लगी है। चेक इतिहास की यह छोटी सी घटना इस नाटक की आधार कथा है।

'हानूश' एक संघर्षशील कलाकार की संवेदनात्मक अभिव्यक्ति है। यह नाटक न तो ऐतिहासिक नाटक है और न ही इसका उद्देश्य घड़ी के आविष्कार की कहानी कहना है। इस ऐतिहासिक संदर्भ के माध्यम से एक कलाकार के संघर्ष को दिखाते हुए भीष्म साहनी ने इस सत्य का प्रतिपादन किया है कि विघ्नों और आपदाओं की उपस्थिति, आर्थिक कठिनाइयों, धर्म और सत्ता के हस्तक्षेपों के बावजूद कलाकार को जिस तरह हानूश अपने लक्ष्य के प्रति अडिग रहा और सफलता प्राप्त की उसी तरह अड़चनों के

बावजूद भी कलाकार को अपने रचनाकर्म में लगे रहना चाहिए। इस नाटक में एक रचनाकार की दुर्दमनीय सृजनेच्छा, उसकी विवशता, निरीहता और उसकी संकटापन्न अवस्था को नाटककार ने पूरी तरह पहचाना है। मोहन राकेश के नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' में साहित्यकार के अंतर्द्वद्ध को उठाया गया था लेकिन उसकी सृजनेच्छा की आंतरिक आकुलता और पीड़ा को इतनी सघनता तथा तीव्रता से चित्रित नहीं किया था। 'हानूश' में लेखक की सम्पूर्ण चेतना इसी द्वंद्व और पीड़ा पर केंद्रित है। नाटक में कूटनीति, कूरता, स्वार्थपरता आदि के प्रसंग होने के बावजूद भी इसे हिंदी में लिखे गए कई अन्य नाटकों की तरह व्यंग्य प्रधान राजनैतिक नाटक नहीं कहा जा सकता। बल्कि इस नाटक का मूल स्वर है-सामान्य मनुष्य और उसकी कलात्मक संवेदनशीलता, सृजन की छटपटाहट, कलाकार का पारिवारिक तनाव, आर्थिक संकट, घरेलू वातावरण आदि। हानूश के जीवन के सत्रह वर्षों के इतिहास में संघर्ष के अनेक स्तर हैं- पहला स्तर घर है- घर का तनावपूर्ण माहौल, दूसरा स्तर है- दंड और पुरस्कार की एक साथ घोषणा, संघर्ष का तीसरा स्तर तब आता है जब हानूश को अपने प्रतिशोध से जूझना पड़ता है क्योंकि घड़ी को उसे दुरुस्त करना है। जब घड़ी दुरुस्त करने के लिए हानूश को ले जाया जाता है तब वह अकेले में मौका पाकर उसे तोड़ना चाहता है, परंतु जैसे ही वह उसको हाथ लगाता है, उसकी नीयत बदल जाती है। हानूश की अंतरात्मा उसको घड़ी तोड़ने नहीं देती और वह उसे दुरुस्त कर देता है। इस तरह पूरा नाटक एक तनावपूर्ण स्थित से आरंभ होता है और अंत तक तनाव बना रहता है।

ISSN PRINT 2319 1775 Online 2320 7876
Research Paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved, Journal UGC CARE Listed (Group-I) Volume 11, Iss 01 2022

**'कबिरा खड़ा बाजार में' नाटक का वैशिष्ट्य :**

'कबिरा खड़ा बाजार में भीष्म साहनी का दूसरा नाटक है, जो सन् 1981 ई. में प्रकाशित हुआ था। तीन अंकों में विभक्त इस नाटक में भीष्म साहनी ने प्रमुख पात्रों के माध्यम से मध्ययुगीन परिवेश में प्रत्येक स्तर पर संघर्ष कर रहे कबीर को उनके पारिवारिक और सामाजिक संदर्भों के साथ प्रस्तुत किया गया हैं। कथावस्तु कबीर का सारा जीवन है, जिसमें कबीर का शरारती बचपन, मस्तमौलापन, किसी पर भी बिना डरे कविता करना, निर्भीक वृत्ति आदि सभी बातों को एक-एक प्रसंग के द्वारा व्यक्त किया गया है। ऐतिहासिकता का आभास देकर इस नाटक में आधुनिक युग बोध को उद्घाटित किया गया है। भीष्म साहनी ने इस नाटक में एक ओर मध्ययुगी महात्मा कबीर के निडर, सत्यवादी और अन्याय के विरुद्ध सदा एक संघर्ष करने वाले व्यक्तित्व का चित्रण किया है, तो दूसरी ओर समाज में साम्प्रदायिक तत्व, बाह्य आडम्बर, परम्पराओं का अंधा अनुकरण करने वाले समाज पर भी गहरा आघात किया है। नाटक के केंद्र में है कबीर। अतः सभी दृश्य योजना कबीर से ही सम्बन्धित हैं, चाहे रूढ़ि विरोध हो या सत्संग या शास्त्रार्थ, कोतवाल का दरबार हो या सिकन्दर का काशी पड़ाव प्रत्येक दृश्य कबीर के व्यक्तित्व को उजागर करने वाले हैं। केवल पहले अंक का पाँचवाँ दृश्य, जिसमें बशीरा अपने पूर्वजों का इतिहास बताते हुए मुहम्मद बिन तुगलक और तैमूर लंग के जमाने में पहुँच जाता है तथा दूसरे अंक के दूसरे दृश्य में लोई के विवाह-पूर्व प्रणय प्रसंग का विस्तार नाटक के केंद्रीय प्रवाह को खण्डित करने वाला है। इसके अतिरिक्त घटना क्रम में कोई घुमाव और पेचीदगी नहीं है।

रंगमंच की दृष्टि से यह नाटक कमजोर है। क्योंकि नाटक की गति शिथिल है. गति कम है, चरित्रों का विकास संवाद के द्वारा ही अधिक है, घटनाओं द्वारा कम। अतः अभिनय के लिए गुंजाइश कम है। दृश्य विभाजन और दृश्य विधान की दृष्टि से यह नाटक रंगमंच के अनुकूल है। रंग संकेत भी नाटककार ने पर्याप्त दिए हैं। नाटक में पात्रों की संख्या भी कम है। इस नाटक का मूल नाम 'कबीरदास' था जिसमें कबीर के दस पद खड़ी बोली में थे। अप्रैल 1981 में जब एम. के. रैना ने इस नाटक को 'त्रिवेणी' मुक्ताकाशी मंच पर मंचित किया तब इसका नाम रखा 'कबिरा खड़ा बजार में। नाटक में पदों की संख्या को उन्होंने बढ़ाकर सत्रह कर दिया और पदों को लोक संगीत की धुनों में ढाला दिया।

**सारांश :**

भारतीय जनमानस से गहराई से जुड़े भीष्म साहनी बीसवीं सदी के हिंदी के प्रमुख कथाकार एवं नाटककार हैं। उनकी मान्यता है कि रचनाकार अपनी सर्जनात्मक प्रतिभा के द्वारा रचना को मानवीय संवेदना के ऐसे धरातल पर पहुँचा देता है, जहाँ पूरी मानवता का स्वर सुनाई देता है। कथा-साहित्य भीष्म साहनी के साहित्य सर्जना के केन्द्र में है। साथ ही उन्होंने नाटक, निबन्ध, आलोचना, आत्मकथा, जीवनी आदि विधाओं में भी अपनी लेखनी चलाई है। अपनी रचनाओं के माध्यम से भीष्म साहनी ने अपने समय व समाज की शिनाख्त की है

तथा सत्ता व समाज की विद्रूपताओं का पर्दाफाश किया है। उन्हें अपने वर्तमान समय व समाज की जितनी मुकम्मल समझ है, उतनी ही इतिहास एवं परम्परा की भी।

मूलतः कथाकार होते हुए भी उन्होंने सशक्त नाट्य लेखन किया है। जनवादी सरोकार और रंगमंचीय प्रस्तुति की दृष्टि से उनके नाटक महत्वपूर्ण हैं। इनके नाटकों में न्यायमूलक व्यवस्था की मांग, मानवीय संवेदना के प्रति सरोकार एवं सामाजिक जीवन की विसंगतियों का उद्घाटन की कामनाओं को स्पष्ट देखा जा सकता है और इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए भीष्म साहनी समकालीन यथार्थ के साथ मिथकों व ऐतिहासिक संदर्भों का सर्जनात्मक प्रयोग करते दिखाई देते हैं। साहित्य हमें बेहतर इंसान बनाता है-इन्हीं उद्देश्यों की पूर्ति के लिए ही भीष्म साहनी की लेखनी चलती है।

भीष्म साहनी के पास जीवन को देखने की व्यापक दृष्टि है। मानवीयता उनके नाटकों की आधार भूमि है। व्यक्ति एवं समाज के जटिल संबंधों को सहजता से जीवंत बना देना उनकी विशेषता है। कला और सत्ता के विरोधाभासी चरित्रों की जितनी सशक्त अभिव्यक्ति उनके नाटकों में हुई है वैसी अन्यत्र दुर्लभ है। विषय चाहे ऐतिहासिक हो या काल्पनिक, वे समकालीन समस्याओं एवं विसंगतियों को गहरी सूझ बूझ के साथ प्रदर्शित करते हैं। नाटककार के रूप में उनका योगदान अविस्मरणीय है।

**संदर्भ पुस्तकें :**

1. तनेजा डॉ. जयदेव, आज के हिन्दी रंग नाटक, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण: 2011
2. मोहन डॉ. नरेन्द्र, समकालीन हिन्दी नाटक और रंगमंच, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण: 2009
3. सं. नेमिचन्द्र जैन आधुनिक हिन्दी नाटक और रंगमंच, मैकमिलन कम्पनी, नई दिल्ली, सं. 1978

*****